Published Date 10 May 2020 (Sunday), Posting Days Friday and Saturday

अलग ट्रैक पर चलकर बनी पहचान

ऋषि कपूर

वह तमाम अभिनेताओं के बीच अलग ट्रैक पर चलते रहे। उनके प्रशंसक उन्हें देखते और सराहते रहे। यह खुद में बड़ी बात है क्योंकि उनके आगे-पीछे बड़े भाई रणधीर कपूर समेत अनेक अभिनेता आए और चले गए। वे सभी दो-चार फिल्मों में चमके और फिर लुप्त हो गए। निश्चित ही ऋषि कपूर का व्यक्तिगत आकर्षण और अदाकारी का अंदाज दर्शकों को लुभाता रहा। फिर, वह बुजुर्ग भूमिकाओं में आने लगे। इन भूमिकाओं से वह नई पीढ़ी के भी चहेते बन गए। खासकर 'अग्निपथ...डीडे', 'कपूर एंड संस', '102 नॉट आउट', 'दो दूनी चार', 'चिंटूजी', 'राजमा चावल' आदि फिल्मों में उन्हें अलग-अलग अंदाज की भूमिकाओं में काफी पसंद किया गया।

अजय ब्रह्मात्मज

पहले इरफान और फिर ऋषि कपूर...दो दिनों में देश और दुनिया के दर्शकों ने दो कलाकारों को खो दिया। दोनों अपने तई लोकप्रिय स्टार थे। हिंदी फिल्मों के दर्शक उनकी अनुपस्थिति महसूस करते रहेंगे। इरफान खान बीमारी के ठीक पहले कॅरियर के उरूज पर थे। ऋषि कपूर भी बुजुर्ग किरदारों के रूप में मिलेनियल दर्शकों को भा रहे थे। अमिताभ बच्चन के साथ उनके लिए भी भूमिकाएं लिखी जाने लगी थीं। उनके स्वस्थ होकर काम पर लौटने की आस में अनेक निर्माता-निर्देशक बैठे थे। इरफान लाइलाज गंभीर बीमारी के शिकार थे, इसलिए पता चलते ही उन्होंने सारे काम रोक दिए थे। बीमारी के दौरान उन्होंने बड़े यत्न से 'अंग्रेजी मीडियम' पूरी की थी। सोशल मीडिया और मीडिया में दोनों की चर्चाएं हो रही हैं। जाहिर-सी बात है कि अस्वाभाविक मृत्यु ने दोनों के प्रति दर्शकों को भावुक कर दिया है। अमिताभ बच्चन ने एक ट्वीट में यह बताने की कोशिश की है कि क्यों इरफान के प्रति हम ज्यादा दुखी हैं? उन्होंने सही लिखा है कि इरफान के खोने का दुख इसलिए ज्यादा है कि उनको मिलने वाले अवसर खो गए। उनकी संभावनाएं उद्घाटित नहीं हो पाईं जबकि ऋषि कपूर के साथ ऐसा एहसास नहीं होता।

ऋषि कपूर के महत्व और योगदान को समझना जरूरी है। पिता राज कपूर ने 1970 में आई 'मेरा नाम जोकर' में उन्हें अपने किशोरावस्था की भूमिका दी थी। मासूम ऋषि कपूर ने दी गई भूमिका को अच्छी तरह निभाया था। सभी कहते हैं कि इस फिल्म से हुए नुकसान की भरपाई के लिए राज कपूर ने 'बॉबी' जैसी प्रेम कहानी के बारे में सोचा। खुद सोच कर देखें। क्या 21 साल के नए हीरो के साथ किसी और प्रकार के विषय पर फिल्म बनाई जा सकती थी या उचित होता? हम सभी जानते हैं कि 'बॉबी' की कहानी ख्वाजा अब्बास ने लिखी थी। राज कपूर के साथ उनका पुराना संबंध था। जिस साल 'बॉबी' रिलीज हुई थी, उसी साल प्रकाश मेहरा निर्देशित 'जंजीर' भी रिलीज हुई थी। 'जंजीर' ने फिल्मों में अमिताभ बच्चन को 'एंग्री यंग मैन' की पहचान दी। अमिताभ बच्चन की कामयाब धमाकेदार एंट्री के बावजूद युवा दर्शकों का एक समूह ऋषि कपूर का दीवाना बना रहा।

गौरतलब है कि ऋषि कपूर अपने समकालीन लोकप्रिय स्टारों के मुकाबले में कभी नहीं आए। कवरेज और लेखों में भी उनकी तुलना धर्मेंद्र, राजेश खन्ना, अमिताभ बच्चन, विनोद खन्ना, जितेंद्र और मिथुन चक्रवर्ती से नहीं की गई। वह तमाम अभिनेताओं के बीच अलग ट्रैक पर चलते रहे। उनके प्रशंसक उन्हें देखते और सराहते रहे। यह खुद में बड़ी बात है क्योंकि उनके आगे-पीछे बड़े भाई रणधीर कपूर समेत अनेक अभिनेता आए और चले गए। वे सभी दो-चार फिल्मों में चमके और फिर लुप्त हो गए। निश्चित ही ऋषि कपूर का व्यक्तिगत आकर्षण और अदाकारी का अंदाज दर्शकों को लुभाता रहा। उन्होंने रोमांटिक हीरो की लकीर जल्दी नहीं छोड़ी। कॅरियर के उत्तरार्ध में उन्हें मल्टीस्टारर फिल्म में अमिताभ बच्चन सरीखे अभिनेताओं के साथ आना पड़ा तो भी उनका रोमांटिक ट्रैक चलता रहा। इन फिल्मों में अमिताभ बच्चन के किरदार से पैदा हो रहे तनाव को उनकी रोमांटिक जोड़ी तोड़ती और दर्शकों को राहत प्रदान करती थी।

ऋषि कपूर की फिल्मों में 23 नई हीरोइन लॉन्च हुईं। इन सभी में नीतू सिंह और जयाप्रदा के साथ उनकी जोड़ी ज्यादा पसंद की गई। 1973 में जब वह 'बॉबी' में डिंपल कपाडिया के साथ आए तो दोनों की केमिस्ट्री देखकर सभी को लगा था कि यह रोमांटिक जोड़ी लंबे समय तक चलेगी। लेकिन 'बॉबी' की रिलीज के तुरंत बाद डिंपल कपाड़िया ने राजेश खन्ना से शादी कर ली। इससे ऋषि कपूर को बड़ा झटका लगा। उस समय चल रही ज्यादातर हीरोइनें अंदाज और मिजाज में उनसे बड़ी लगती थीं, इसलिए ऋषि कपूर को बार-बार खुद के लिए नई जोड़ीदार की तलाश करनी पड़ी। उनकी फिल्मों से आई 23 हीरोइनों में से चार-पांच की ही पारी लंबी चली। हां, नीतू सिंह के साथ उनकी जोड़ी ऑन स्क्रीन और ऑफ स्क्रीन बनी रही।

ऋषि कपूर ने एक फिल्म का डायरेक्शन भी किया था। इस फिल्म की शूटिंग के दौरान ही उन्हें पता चल गया था कि वह अपने पिता का अनुसरण नहीं कर सकते। पुलओवर पहने, गले में मफलर डाले और गिटार-डफली बजाते हीरो की भूमिकाओं से वह ऊबने लगे थे। उन्होंने ऐसी भूमिकाएं निभानी बंद का दीं। तभी खानत्रयी- आमिर, शाह रुख और सलमान, ने आकर उनका मैदान मार दिया था। फिर, वह बुजुर्ग भूमिकाओं में आने लगे। इन भूमिकाओं में उन्हें फिर से पसंद किया जाने लगा। नई पीढ़ी के वह चहेते बने। खासकर 'अग्निपथ... डीडे', 'कपूर एंड संस', '102 नॉट आउट', 'दो दूनी चार', 'चिंटूजी', 'राजमा चावल' आदि फिल्मों में उन्हें अलग-अलग अंदाज की भूमिकाओं में भी पसंद किया गया। 'अग्निपथ' की निगेटिव भूमिका में मिली चौतरफा तारीफ से वह गदगद थे। उनकी ख्वाहिश थी तीनों- ऋषि, नीतू और रणबीर, किसी फिल्म में साथ आएं। अभिनव कश्यप की फिल्म 'बेशर्म' में उन्हें यह मौका मिला लेकिन 'बेशर्म' ने उन्हें और उनके प्रशंसकों को शर्मिंदा कर दिया।

***

इरफान बिल्कुल अलग पृष्ठभूमि से फिल्मों में आए। जयपुर में कॉलेज के दिनों में रंगमंच करने के बाद अभिनेता बनने की इच्छा जगी। उम्मीद कम थी कि परिवार से अनुमति मिलेगी लेकिन मां राजी हुईं और उन्हें खुशी-खुशी जाने दिया। वहां से एनएसडी पहुंचे। दिल्ली महानगर में शुरू के उनके दिन और असुरक्षा और डर के थे। छोटे शहर से बड़े शहरों मे आया हर महत्वाकांक्षी शख्स ऐसे डर से गुजरता है। एनएसडी में कुछ साथी बने। सुतापा सिकदर मिली जो बाद में उनकी जीवनसंगिनी बनीं। इरफान के व्यक्तित्व के निर्माण में सुतापा सिकदर की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। उन्होंने इरफान को संभाला, संवारा और निखरने का पूरा मौका और सहयोग दिया। वह नेपथ्य में रहकर इरफान को प्रेरित और प्रोत्साहित करती रहीं। वर्तमान प्रसिद्धि तक आने में इरफान को अपमान, तिरस्कार और रिजेक्शन के पड़ावों को पार करना पड़ा।

इरफान के कॅरियर पर नजर डालें तो उन्हें मुंबई आने तक कुछ छोटी फिल्में मिल चुकी थीं। उनकी 'कमला की मौत', 'एक डॉक्टर की मौत' और 'दृष्टि' जैसी फिल्में आने को तैयार थीं। याद करें तो ये फिल्में पैरेलल सिनेमा के तलछट के रूप में नजर आती हैं...पैरेलल सिनेमा के अवसान काल की इन फिल्मों से उन्हें पेशेवर फायदा नहीं हुआ। उन्हें आजीविका और अपने को बचाए रखने के लिए टीवी में जाना पड़ा। उन्हें थिएटर करना नहीं था। इस मामले में वह एकदम स्पष्ट थे। श्याम बेनेगल के टीवी शो 'भारत एक खोज' में अलबरूनी की भूमिका से उन्होंने शुरुआत की। 'चाणक्य', 'चंद्रकांता', 'बनेगी अपनी बात' और छोटे-बड़े टीवी शो से वह आगे बढ़ते रहे। लगातार टीवी शो करने से आई एकरसता से वह पक रहे थे। तभी उन्हें आसिफ कपाड़िया की फिल्म 'वारियर' मिली। इस फिल्म में मिले मौके से उनकी खास पहचान बनी। देश-विदेश के निर्देशकों ने गौर किया। फिल्में मिलने लगीं। एनएसडी के उनके दोस्त तिग्मांशु धूलिया ने 'हासिल' में उन्हें भूमिका दी। इस भूमिका में वह पसंद किए गए। फिर विशाल भारद्वाज की 'मकबूल' मिली। दोनों फिल्मों से उनकी दिशा और मंजिल का संकेत दे दिया। हालांकि वह उन दिनों मेनस्ट्रीम हिंदी सिनेमा में भी जोर-आजमाइश करते रहे लेकिन उनकी पहचान अलहदा किस्म के अभिनेता के रूप में ठोस होती गई। 2006 में आई मीरा नायर की 'नेमसेक' से उन्हें व्यापक पहचान मिली। इस फिल्म से इरफान के रेन्ज का पता चला। 'नेमसेक' ने उनके लिए पश्चिम की फिल्मों के द्वार खोल दिए। हिंदी में भी उनकी भूमिकाओं पर ध्यान दिया जाने लगा। धीरे-धीरे इरफान भरोसेमंद अभिनेता के रूप में उभरे और प्रचलित नायकों से अलग छवि और मुद्राओं के साथ वह फिल्मों में नजर और पसंद आए। 'द लंच बॉक्स', 'हिंदी मीडियम', 'किस्सा' आदि फिल्मों में हम देखते हैं कि वह एक साथ अनेक धरातलों पर मौजूद थे।

अमेजॉन प्राइम की एक वेब सीरीज की शूटिंग के दौरान उन्हें अपनी बीमारी का पता चला। बीमारी की गंभीरता और लंबे इलाज की सच्चाई को समझते हुए उन्होंने फिल्मों में अभिनय के सारे काम रोक दिए। बीमारी के दिनों में लंदन से उन्होंने एक पत्र इन पंक्तियों के लेखक को भेजा था जो जून, 2018 में सभी पत्र-पत्रिकाओं में छपा था। उस पत्र को ध्यान से पढ़ें तो इरफान ने अनिश्चितता के मध्य आगत का संकेत दे दिया था। आखिरकार 29 अप्रैल, 2020 को उनका स्टॉप आ गया और वह जिंदगी की गाड़ी से उतर गए।

अनिश्चितता ही निश्चित है इस दुनिया में

इरफान

अभी तक अपने सफ़र में मैं तेज-मंद गति से चलता चला जा रहा था। मेरे साथ मेरी योजनाएं, आकांक्षाएं, सपने और मंजिलें थीं। मैं इनमें लीन बढ़ा जा रहा था कि अचानक टीसी ने पीठ पर टैप किया, "आप का स्टेशन आ रहा है, प्लीज उतर जाएं।" मेरी समझ में नहीं आया, "ना...ना... मेरा स्टेशन अभी नहीं आया है।" जवाब मिला, "अगले किसी भी स्टाप पर आपको उतरना होगा, आपका गन्तव्य आ गया।" अचानक एहसास होता है कि आप किसी ढक्कन (कॉर्क) की तरह अनजान सागर में, अप्रत्याशित लहरों पर बह रहे हैं... लहरों को काबू कर लेने की गलतफहमी लिए। इस हड़बोंग, सहम और डर में घबराकर मैं अपने बेटे से कहता हूं, "आज की इस हालत में मैं केवल इतना ही चाहता हूं... मैं इस मानसिक स्थिति को हड़बड़ाहट, डर, बदहवासी की हालत में नहीं जीना चाहता। मुझे किसी भी सूरत में मेरे पैर चाहिए, जिन पर खड़ा होकर अपनी हालत को तटस्थ हो कर जी पाऊं। मैं खड़ा होना चाहता हूं।" ऐसी मेरी मंशा थी, मेरा इरादा था...

कुछ हफ्तों के बाद मैं एक अस्पताल में भर्ती हो गया। बेइंतहा दर्द हो रहा है। यह तो मालूम था कि दर्द होगा, लेकिन ऐसा दर्द... अब दर्द की तीव्रता समझ में आ रही है। कुछ भी काम नहीं कर रहा है। ना कोई सांत्वना, ना कोई दिलासा। पूरी कायनात उस दर्द के पल में सिमट आई थी। दर्द खुदा से भी बड़ा और विशाल महसूस हुआ। मैं जिस अस्पताल में भर्ती हूं, उसमें बालकनी भी है। बाहर का नजारा दिखता है। कोमा वार्ड ठीक मेरे ऊपर है। सड़क की एक तरफ मेरा अस्पताल है और दूसरी तरफ लॉर्ड्स स्टेडियम है... वहां विवियन रिचर्ड्स का मुस्कुराता पोस्टर है। मेरे बचपन के ख्वाबों का मक्का, उसे देखने पर पहली नजर में मुझे कोई एहसास ही नहीं हुआ। मानो वह दुनिया कभी मेरी थी ही नहीं।

मैं दर्द की गिरफ्त में हूं। और फिर एक दिन यह अहसास हुआ... जैसे मैं किसी ऐसी चीज का हिस्सा नहीं हूं, जो निश्चित होने का दावा करे। न अस्पताल और न स्टेडियम। मेरे अंदर जो शेष था, वह वास्तव में कायनात की असीम शक्ति और बुद्धि का प्रभाव था। मेरे अस्पताल का वहां होना था। मन ने कहा, केवल अनिश्चितता ही निश्चित है।...इस अहसास ने मुझे समर्पण और भरोसे के लिए तैयार किया।... चिंता दरकिनार हुई और फिर विलीन होने लगी और फिर मेरे दिमाग से जीने-मरने का हिसाब निकल गया। पहली बार मुझे शब्द 'आजादी' का एहसास हुआ, सही अर्थ में! एक उपलब्धि का अहसास।...

(इरफान खान जब लंदन के अस्पताल में अपनी दुर्लभ बीमारी न्यूरोएन्डोक्राइन कैंसर का इलाज करवा रहे थे तो उन्होंने जून, 2018 को एक भावपूर्ण पत्र अपने मित्र और स्तंभकार अजय ब्रह्मात्मज को लिखा था। यह अंश उसी पत्र से लिया गया है।)

इरफान खान

इरफान को वर्तमान प्रसिद्धि तक आने में अपमान, तिरस्कार और रिजेक्शन के पड़ावों को पार करना पड़ा था। समानांतर सिनेमा के अवसान काल की कुछ फिल्मों में अभिनय से उन्हें पेशेवर फायदा नहीं हुआ। उन्हें अपने को बचाए रखने के लिए टीवी में भी जाना पड़ा। बाद में फिल्म 'वारियर' से उनकी खास पहचान बनी। इसके बाद 'हासिल' और 'मकबूल' और 'नेमसेक' जैसी फिल्मों से उनके अभिनय की रेंज का पता चला। धीरे-धीरे इरफान भरोसेमंद अभिनेता और प्रचलित नायकों से अलग छवि के साथ फिल्मों में नजर आए। 'द लंच बॉक्स', 'हिंदी मीडियम', 'किस्सा' आदि अनेक फिल्मों में वह एक साथ अनेक धरातलों पर मौजूद थे।

कोरोना की अफरातफरी में करोड़ों शिशुओं की सेहत खतरे में

प्रतीकात्मक तस्वीर

कोविड-19 के खिलाफ छेड़े गए युद्ध की तपिश में बच्चों का टीकाकरण रुक गया है। पिछले तीन-चार महीनों में जन्मे शिशुओं का स्वास्थ्य संकट में है। राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय परिवहन पर लगी पाबंदियों के कारण वैक्सीन की सप्लाई चेन भी टूट गई है। यूनिसेफ ने चेतावनी दी है कि टीकाकरण कार्यक्रम को फिर से पूरे जोर-शोर से नहीं चलाया जाएगा, तो दक्षिण एशिया के देशों के बच्चों के स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा हो जाएगा। यूनिसेफ के क्षेत्रीय निदेशक ज्यां गॉफ का तो कहना है कि बच्चों को जितना खतरा कोरोना से है, उससे ज्यादा बड़ा खतरा उन बीमारियों से है जिनसे बचाव के लिए टीके लगाए जाते हैं। 'अलजजीरा' की रिपोर्ट के अनुसार, टीकाकरण रुक जाने के कारण दुनियाभर के करीब 11.7 करोड़ बच्चों की जिंदगी खतरे में पड़ गई है। यह खतरा कोरोना के खतरे से कहीं बड़ा है। दक्षिण एशिया के अलावा पश्चिम एशिया और अफ्रीका के देशों की दशा भी खराब है।

प्रमोद जोशी

हाल में एक छोटी सी खबर पढ़ने को मिली कि कोविड-19 को देखते हुए 25 मार्च से माताओं और दो साल तक के बच्चों की ठप पड़ी टीकाकरण स्कीम फिर से शुरू हो गई है। पूरे देश में अभी सामान्य व्यवस्था कायम हुई नहीं है, इसलिए कहना मुश्किल है कि देशभर का क्या हाल है, पर इतना जाहिर है कि कोरोना वायरस के कारण छोटे बच्चों का टीकाकरण प्रभावित हुआ है। इस दौरान अप्रैल के अंतिम सप्ताह में हमने वैश्विक टीकाकरण सप्ताह भी मनाया, पर टीकाकरण की गाड़ी ठप पड़ी रही। कोविड-19 के खिलाफ लड़ाई में भारत का सकारात्मक पहलू है हमारा अनिवार्य टीकाकरण कार्यक्रम। माना जा रहा कि भारत के लोगों में कई प्रकार के रोगों की प्रतिरोधक शक्ति है। कम से कम 20 ऐसे रोग हैं, जिन्हें टीके की मदद से रोका जा सकता है।

इन दिनों हम कोरोना के खिलाफ जिन आंगनबाड़ी और आशा कार्यकर्ताओं की भूमिका की प्रशंसा कर रहे हैं, वे हमारे मातृ एवं शिशु कार्यक्रम की ध्वजवाहक हैं। उनकी तारीफ के साथ यह बताना भी जरूरी है कि कोविड-19 की अफरातफरी ने टीकाकरण कार्यक्रम को धक्का पहुंचाया है। केवल टीकाकरण की बात ही नहीं है। कोरोना के खिलाफ लड़ाई के इस दौर में जल्दबाजी, असावधानी या प्राथमिकताओं के निर्धारण में बरती गई नासमझी में सामान्य स्वास्थ्य की जो अनदेखी हुई है, अब उसकी तरफ भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

स्वास्थ्य सेवाओं पर लॉकडाउन

लॉकडाउन के साथ-साथ अचानक दूसरी स्वास्थ्य सेवाओं की तरफ से हमारा ध्यान हट गया। ऐसे में कैंसर, हृदय, लिवर और किडनी और दूसरी बीमारियों से परेशान रोगियों के लिए आवश्यक सुविधाओं में कमी आ गई। कोविड-19 लिए विशेष अस्पतालों की व्यवस्थाओं को स्थापित करने के कारण अस्पतालों की ओपीडी सेवाएं बंद हो गईं। डायलिसिस और कीमोथेरेपी जैसी जरूरी चिकित्सा सुविधाएं भी प्रभावित हुईं। केवल स्वास्थ्य सुविधाएं ही नहीं दुनियाभर के बच्चों की पढ़ाई को नुकसान पहुंचा है। इन दिनों बच्चे और किशोर किस मनोदशा से गुजर रहे हैं, इसका अनुमान लगाना काफी मुश्किल है।

वैश्विक चिकित्सा-तंत्र और वैज्ञानिकों के प्रयासों का फल है कि कोविड-19 से लड़ने के लिए दवाई और वैक्सीन दोनों का ही विकास जिस तेजी से हुआ है, उसकी मिसाल मिलती नहीं है। दूसरी तरफ दुनियाभर की सरकारों ने इस बात पर ध्यान दिया है कि सामान्य स्वास्थ्य सेवाओं की बहाली भी जल्द से जल्द शुरू होनी चाहिए। इस बीच दुनिया का ध्यान नवजात शिशुओं के टीकाकरण में आए व्यवधान की ओर भी गया है। कोविड-19 के खिलाफ छेड़े गए युद्ध की तपिश में बच्चों का टीकाकरण रुक गया है।

दक्षिण एशिया में संकट

गत 28 अप्रैल को संयुक्त राष्ट्र की एजेंसी यूनिसेफ ने अपनी एक रिपोर्ट में चेतावनी दी कि टीकाकरण कार्यक्रम को फिर से पूरे जोर-शोर से नहीं चलाया जाएगा, तो दक्षिण एशिया के देशों के बच्चों के स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा हो जाएगा। दुनिया के करीब एक चौथाई ऐसे बच्चे हैं जिनका टीकाकरण नहीं हुआ है या आंशिक रूप से हुआ है, दक्षिण एशिया में रहते हैं। इनकी संख्या करीब 45 लाख है। इनमें भी 97 फीसदी बच्चे भारत, पाकिस्तान और अफगानिस्तान के निवासी हैं। कोविड-19 के खिलाफ लड़ाई में लॉकडाउन का प्रभाव सामान्य टीकाकरण कार्यक्रम पर भी पड़ा है। पिछले तीन-चार महीनों में जन्मे शिशुओं का स्वास्थ्य संकट में है।

सरकार और अनेक गैर-सरकारी संगठनों के प्रयासों से चल रही टीकाकरण स्कीमों के बावजूद इस क्षेत्र में बड़ी संख्या में लोग अपने बच्चों को टीकाकरण केंद्र तक नहीं ले जाते हैं। जागरुकता का अभाव है और कई तरह की गलतफहमियां भी उनके बीच हैं। ऐसे में लॉकडाउन के कारण यह कार्यक्रम और पीछे चला गया है। और अब बांग्लादेश, पाकिस्तान और नेपाल से खबरें आ रही हैं कि कुछ ऐसी बीमारियां फिर से उभर रहीं हैं, जिन्हें वैक्सीन की सहायता से रोका जा सकता है। इनमें खसरा और डिप्थीरिया शामिल हैं। हालांकि भारत में पोलियो का खात्मा हो चुका है, पर हमारे इलाके के ही दो देश ऐसे हैं, जहां यह बीमारी अभी पूरी तरह खत्म नहीं हुई है। दुनिया में केवल पाकिस्तान और अफगानिस्तान दो ऐसे देश हैं, जहां से पोलियो खत्म नहीं हुआ है। एक बार प्रतिरोधक चेन टूटने का मतलब होता है, बरसों पीछे चले जाना।

टीकाकरण पर असर : कोरोना से लड़ाई के इस दौर में शिशुओं का टीकाकरण रोकने की जरूरत नहीं थी। सोशल डिस्टेन्सिंग और सावधानियों के उन सभी नियमों का पालन किया जा सकता था जो इस समय जरूरी हैं। टीकाकरण से जुड़े कार्यकर्ता हाथ धोने, मास्क लगाने और सफाई से जुड़ी सावधानियां बरतने से परिचित होते हैं।

टीकों की कमी

टीकाकरण कार्यक्रम को धक्का लगने के अनेक कारण हैं। पहला कारण तो खुले आवागमन पर लगी रोक है। पर इससे भी बड़ा कारण है टीकाकरण केंद्रों में अचानक टीकों की कमी। जिस तरह अन्य सामग्रियों की किल्लत पैदा हो रही है, उसी तरह राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय परिवहन पर लगी पाबंदियों के कारण वैक्सीन की सप्लाई चेन भी टूट गई है। यूनिसेफ के क्षेत्रीय स्वास्थ्य सलाहकार पॉल रटर ने हाल में बताया कि केवल सप्लाई ही नहीं वैक्सीन का उत्पादन भी प्रभावित हुआ है, इससे तंगी और बढ़ गई है। संस्था के क्षेत्रीय निदेशक ज्यां गॉफ के अनुसार इन बच्चों को जितना खतरा कोरोना से है, उससे ज्यादा बड़ा खतरा उन बीमारियों से है, जिनसे बचाव के लिए टीके लगाए जाते हैं। बड़ी संख्या में बच्चों के सिर पर अब खतरा मंडरा रहा है।

टीकाकरण कार्यक्रम को सफलता के साथ चलाने का एक तंत्र है और लोगों को जागरूक बनाए रखने वाली एक व्यवस्था है। कोरोना से लड़ाई की अफरातफरी में हुआ यह है कि पूरे क्षेत्र में बच्चों के टीकाकरण से जुड़े केंद्र बंद हो गए हैं और नागरिकों को जागरूक बनाने वाली गतिविधियां ठप पड़ गई हैं। इन्हें रोकने की कोई जरूरत नहीं थी। टीकाकरण से जुड़े कार्यकर्ता हाथ धोने, मास्क लगाने और सफाई से जुड़ी सावधानियां बरतने से परिचित होते हैं। बेशक कोरोना से जुड़ी स्वास्थ्य सेवाएं जरूरी हैं, पर शिशुओं के टीकाकरण को रोकने की जरूरत नहीं थी।

बांग्लादेश और नेपाल ने खसरे और रूबेला कार्यक्रमों को स्थगित कर दिया। पाकिस्तान और अफगानिस्तान ने पोलियो कार्यक्रम रोक दिया। इन देशों में पोलियो कार्यकर्ताओं पर पहले भी हमले होते रहे हैं। कई तरह की गलतफहमियां नागरिकों के मन में हैं। पाकिस्तानी शहर एबटाबाद में ओसामा बिन लादेन को मार गिराने के लिए अमेरिकी एजेंसी सीआईए ने टीकाकरण के एक कार्यक्रम का सहारा लिया था। उसके बाद से इस इलाके में टीकाकरण कार्यकर्ताओं को संदेह की निगाहों से देखा जाता है। कोविड-19 के बाद अब इन कार्यक्रमों को फिर से शुरू करने के पहले सरकारों को ज्यादा ऊर्जा और साधनों की जरूरत होगी।

11.7 करोड़ बच्चों पर खतरा

अलजजीरा की एक रिपोर्ट के अनुसार टीकाकरण रुक जाने के कारण दुनियाभर के करीब 11.7 करोड़ बच्चों की जिंदगी खतरे में पड़ गई है। यह खतरा कोरोना के खतरे से कहीं बड़ा है। दक्षिण एशिया के अलावा पश्चिम एशिया और अफ्रीका के देशों की दशा भी खराब है। इन देशों में पांच साल के कम उम्र के करीब एक करोड़ बच्चों को पोलियो की खुराक नहीं मिल पाई है। 15 साल से कम उम्र के करीब 45 लाख बच्चों को खसरे का टीका नहीं लग पाया है। यह बेहद जरूरी है कि बच्चों को पोलियो, खतरे, डिप्थीरिया और हेपेटाइटिस के टीके समय पर लगें।

कोई वजह नहीं थी कि कोरोना से लड़ाई के दौर में टीकाकरण रोका जाता। सोशल डिस्टेन्सिंग और सावधानियों के उन सभी नियमों का पालन किया जा सकता था, जो इस समय जरूरी हैं। पर एक के बाद एक सरकारों ने बच्चों के टीकाकरण के महत्व को बिसरा दिया। अफ्रीका के तमाम देशों में ये कार्यक्रम ठप पड़े हैं, क्योंकि सीमाएं बंद हैं और स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का आवागमन भी ठप है। परिवहन सेवाओं ने टीकों की सप्लाई रोक दी है। इस सप्लाई को फिर से शुरू करने में भी समय लगेगा। कोरोना वायरस का खतरा पैदा होने के पहले भी यूनिसेफ का अनुमान था कि दुनिया में हर साल करीब डेढ़ करोड़ बच्चे खसरे के टीके से वंचित रहते हैं।

दुनिया में हर साल करीब 11.7 करोड़ नवजात शिशुओं का टीकाकरण होता है। यह संख्या दुनिया भर में जन्मे बच्चों का करीब 86 प्रतिशत है। इसका मतलब है कि करीब एक करोड़ 30 लाख या उससे कुछ ज्यादा बच्चे टीकों से वंचित रह जाते हैं। अब लगता है कि कोरोना के कारण वंचित रह जाने वाले बच्चों की संख्या काफी बढ़ जाएगी, जो उनके भविष्य के लिए खतरा होगा।